परीक्षामुख

अनुक्रमणिका

परिच्छेद-1

1-00) मंगलाचरण
1-01) प्रमाण का लक्षण
1-02) प्रमाण-लक्षण में ज्ञान विशेषण की सार्थकता
1-03) प्रमाण का निश्चायकपना
1-04) अपूर्वार्थ का लक्षण
1-05) अपूर्वार्थ का दूसरा लक्षण
1-06) स्वव्यवसाय का स्वरूप
1-07) स्वव्यवसाय का दृष्टान्त
1-08) पदार्थ को जानते समय ज्ञान में प्रतीति
1-09)
1-10) शब्दोच्चारण बिना ही स्वव्यवसायकता
1-11) स्वप्रतीति की पुष्टि व उदाहरण
1-12)
1-13) प्रमाण के प्रामाण्य का निर्णय

परिच्छेद-2

2-01) प्रमाण के भेद
2-02) भेदों का स्पष्टीकरण
2-03) प्रत्यक्ष प्रमाण का स्वरूप
2-04) वैशद्य का स्वरूप
2-05) सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष का लक्षण
2-06) पदार्थ और प्रकाश के ज्ञानकारणता के निषेध में तर्क
2-07) इसी बात को उदाहरण से सतर्क स्पष्ट करते हैं
2-08) ज्ञान के अर्थजन्यता और अर्थाकारता का खण्डन
2-09) ज्ञान के विषय की निश्चित व्यवस्था
2-10)
2-11) मुख्य प्रत्यक्ष का स्वरूप
2-12) अतीन्द्रिय व अनावरणत्व विशेषण की सार्थकता

परिच्छेद-3

3-01) परोक्ष का लक्षण और निर्णय -
3-02) परोक्ष के कारण और भेद -
3-03) स्मृति-प्रमाण का लक्षण वा कारण -
3-04) स्मृति का दृष्टान्त -
3-05) प्रत्यभिज्ञान का लक्षण वा स्वरूप -
3-06) प्रत्यभिज्ञान के दृष्टान्त -
3-07) तर्क-प्रमाण का कारण वा लक्षण -
3-08-09) व्याप्तिज्ञान की प्रवृत्ति का प्रकार -
3-10) अनुमान का कारण और स्वरूप -
3-11) हेतु (साधन) का लक्षण -
3-12) अविनाभाव के भेद -
3-13) सहभाव-नियम का लक्षण -
3-14) क्रमभाव-नियम का लक्षण -
3-15) व्याप्तिज्ञान (अविनाभाव) के निर्णय का कारण -
3-16) साध्य का स्वरूप -

3-17) साध्य के लक्षण में असिद्ध विशेषण की सार्थकता -
3-18) साध्य के लक्षण में इष्ट और अबाधित पदों का सार्थक्य -
3-19) साध्य का इष्ट विशेषण वादी की अपेक्षा से होता है -
3-20) इष्ट विशेषण वादी की अपेक्षा होने का कारण -
3-21) साध्य का निर्णय -
3-22) धर्मी का नामान्तर -
3-23) पक्ष की प्रसिद्धता या लक्षण -
3-24) विकल्पसिद्ध धर्मी में साध्य का नियम -
3-25) विकल्पसिद्ध धर्मी का उदाहरण -
3-26) प्रमाणसिद्ध धर्मी और विकल्पसिद्ध धर्मी मंे साध्य -
3-27) प्रमाणसिद्ध और विकल्पसिद्ध धर्मी के दृष्टान्त -
3-28) व्याप्तिकाल में साध्य का नियम -
3-29) व्याप्तिकाल में धर्मी को साध्य मानने से हानि -
3-30) पक्ष का प्रयोग करने की आवश्यकता -
3-31) पक्ष का प्रयोग करने की आवश्यकता का दृष्टान्त -
3-32) पक्ष के प्रयोग की आवश्यकता की पुष्टि -
3-33) अनुमान के अंगों का निर्णय -
3-34) उदाहरण का अनुमान का अंग न होने में कारण -
3-35) उदाहरण की आवश्यकता का खण्डन -
3-38) उदाहरण-प्रयोग से हानि -
3-39) केवल उदाहरण-प्रयोग से सन्देह
3-40) उपनय और निगमन अनुमानाङ्ग नहीं
3-41) हेतु आवश्यक; उदाहरण अनावश्यक
3-42) उदाहरण, उपनय और निगमन की आवश्यकता
3-43) दृष्टान्त के भेद
3-44) अन्वय-दृष्टान्त का लक्षण
3-45) व्यतिरेक-दृष्टान्त का स्वरूप
3-46) उपनय का लक्षण
3-47) निगमन का स्वरूप
3-48) अनुमान के भेद
3-49) अनुमान के दो भेदों का स्पष्टीकरण
3-50) स्वार्थानुमान का लक्षण
3-51) परार्थानुमान का लक्षण
3-52) परार्थानुमान-प्रतिपदाक वचन के परार्थानुमानपना
3-53) हेतु के भेद
3-54) उपलब्धिरूप और अनुपलब्धिरूप हेतु के विषय
3-55) अविरुद्धोपलब्धि हेतु के छह भेद
3-56) कारण-हेतु के विधिसाधकपना
3-57) पूर्वचर और उत्तरचर हेतुओं की अन्य हेतुओं से भिन्नता
3-58) काल का व्यवधान होने पर भी कार्य-कारण भाव मानने का खण्डन
3-59) काल-व्यवधान होने पर भी कार्य-कारण-भाव मानने के खण्डन में हेतु
3-60) सहचरहेतु का स्वभावहेतु और कार्यहेतु से पृथक्पन
3-61) अविरुद्वव्याप्योपलब्धि का उदाहरण
3-62) अविरुद्धकार्योपलब्धि (कार्यहेतु) का उदाहरण
3-63) अविरुद्धकारणोपलब्धि (कारणहेतु) का उदाहरण
3-64) अविरुद्धपूर्वचरोपलब्धि (पूर्वचरहेतु) का उदाहरण
3-65) अविरुद्ध उत्तरचरोपलब्धि (उत्तरचरहेतु) का उदाहरण
3-66) अविरुद्धसहचरोपलब्धि (सहचरहेतु) का उदाहरण
3-67) प्रतिषेधरूप विरुद्धोपलब्धि हेतु के भेद
3-68) विरुद्धव्याप्योपलब्धि हेतु का दृष्टान्त
3-69) विरुद्धकार्योपलब्धि हेतु का उदाहरण
3-70) विरुद्धकारणोपलब्धि हेतु का उदाहरण
3-71) विरुद्धोपूर्वचरोपलब्धि हेतु

3-72) विरुद्धोत्तरचरोपलब्धि हेतु
3-73) विरुद्धोसहचरोपलब्धि हेतु
3-74) अविरुद्धानुपलब्धि के भेद
3-75) अविरुद्धस्वभावानुपलब्धि का उदाहरण
3-76) अविरुद्धव्यापकानुपलब्धि हेतु
3-77) अविरुद्ध कार्यानुपलब्धि हेतु
3-78) अविरुद्ध कारणानुपलब्धि हेतु
3-79) अविरुद्धपूर्वचरानुपलब्धि हेतु
3-80) अविरुद्ध उत्तरचर अनुपलब्धि हेतु
3-81) अविरुद्धसहचरोपलब्धि
3-82) विरुद्ध कार्यानुपलब्धि आदि हेतु विधि में सम्भव, उसके भेद
3-83) विरुद्धकार्यानुपलब्धि हेतु का उदाहरण
3-84) विरुद्धकारणानुपलब्धि हेतु
3-85) विरुद्धस्वभावानुपलब्धि रूप हेतु का उदाहरण
3-86) परम्परा से संभव अन्य हेतुओं का पूर्वोक्त हेतुओं में ही अन्तर्भाव
3-87) पूर्वानुक्त हेतु का प्रथमोदाहरण
3-88) उक्त हेतु की क्या संज्ञा है?
3-89) परम्परा हेतु का दूसरा दृष्टान्त
3-90) व्युत्पन्नपुरुषों के प्रति अनुमान के अवयवों के प्रयोग का नियम
3-91) व्युत्पन्न प्रयोग की उदाहरण द्वारा पुष्टि
3-92) उदाहरणादि के बिना व्याप्ति के नि}चयाभाव की आशंका का निराकरण
3-93) दृष्टान्तादिक साध्य की सिद्धि के लिए फलवान नहीं
3-94) पक्ष का प्रयोग सफल है
3-95) आगम का स्वरूप
3-96) शब्द से वास्तविक अर्थबोध होने का कारण
3-97) शब्दार्थ से अर्थ अवबोध होने का दृष्टान्त

परिच्छेद-4

4-01) प्रमाण का विषय
4-02) अनेकान्तात्मक वस्तु के समर्थन के लिए दो हेतु
4-03) सामान्य के भेद
4-04) तिर्यक् सामान्य
4-05) ऊर्ध्वता सामान्य
4-06) विशेष भी दो प्रकार का
4-07) विशेष के भेद
4-08) पर्याय विशेष
4-09) विशेष का दूसरा भेद

परिच्छेद-5

5-01) प्रमाण का फल
5-02) प्रमाण से फल भिन्न या अभिन्न?
5-03) कथञ्चित् अभेद का समर्थन

परिच्छेद-6

6-01) प्रमाणाभास
6-02) स्वरूपाभास
6-03) क्योंकि वे अपने विषय का निश्चय नहीं करते हैं।
6-04) दृष्टान्त
6-05) सन्निकर्षवादी के प्रति दूसरा दृष्टान्त
6-06) प्रत्यक्षाभास
6-07) परोक्षाभास
6-08) स्मरणाभास
6-09) प्रत्यभिज्ञानाभास
6-10) तर्काभास

6-11) अनुमानाभास
6-12) पक्षाभास
6-13) अनिष्टपक्षाभास
6-14) सिद्धपक्षाभास
6-15) बाधितपक्षाभास
6-16) प्रत्यक्षबाधित
6-17) अनुमानबाधितपक्षाभास
6-18) आगमबाधितपक्षाभास
6-19) लोकबाधितपक्षाभास
6-20) स्ववचनबाधितपक्षाभास
6-21) हेत्वाभासों के भेद
6-22) असिद्ध हेत्वाभास
6-23) स्वरूपासिद्ध हेत्वाभास
6-24) इस हेतु के असिद्धपना कैसा?
6-25) असिद्ध हेत्वाभास का दूसरा भेद
6-26) इस हेतु की भी असिद्धता कैसे ?
6-27) असिद्धहेत्वाभास का और भी दृष्टान्त
6-28) इस हेतु की असिद्धता में कारण
6-29) विरुद्ध हेत्वाभास
6-30) अनैकान्तिक हेत्वाभास
6-31) निश्चित विपक्षवृत्ति का उदाहरण
6-32) प्रमेयत्व हेतु की भी विपक्ष में वृत्ति कैसे निश्चित है?
6-33) शंकित विपक्षवृत्ति अनैकान्तिक हेत्वाभास
6-34) इस वक्तत्व हेतु का भी विपक्ष में रहना कैसे शंकित है?
6-35) अकिञ्चित्कर हेत्वाभास
6-36) सिद्धसाध्य अकिञ्चित्कर हेत्वाभास
6-37) शब्दत्व हेतु के अकिञ्चित्करता कैसे
6-38) शब्दत्वहेतु के अकिञ्चित्करत्व की पुष्टि
6-39) अकिञ्चित्कर हेत्वाभास के प्रयोग की उपयोगिता
6-40) अन्वय दृष्टान्ताभासों के भेद
6-41) अन्वयदृष्टान्ताभास के भेद
6-42) अन्वय दृष्टान्ताभास का उदाहरणान्तर
6-43) अन्वय दृष्टान्ताभास की पुष्टि
6-44) व्यतिरेक उदाहरणाभास
6-45) व्यतिरेक दृष्टान्ताभास का उदाहरणान्तर
6-46) बालप्रयोगाभास
6-47) बालप्रयोगाभास का उदाहरण
6-48) चार अवयवों के प्रयोग करने पर तदाभासता
6-49) अवयवों के विपरीत प्रयोग करने पर भी प्रयोगाभास
6-50) अवयवों के विपरीत प्रयोग करने पर प्रयोगाभास कैसे?
6-51) आगमाभास
6-52) आगमाभास का उदाहरण
6-53) आगमाभास का दूसरा उदाहरण
6-54) दोनों वाक्यों में आगमाभासपना कैसे?
6-55) संख्याभास
6-56) यह संख्याभास कैसे?
6-57) बौद्धादि के मत में भी संख्याभासपना
6-58) अन्य अनुमानादिक से प्रमाण हो जायेगा?
6-59) इसी विषय में उदाहरण
6-61) विषयाभास
6-62) सांख्यादिकों की मान्यताएँ विषयाभास
6-66) फलाभास
6-67) सर्वथा अभिन्न पक्ष में फलाभास

6-68) कल्पना से प्रमाण और फल का व्यवहार करने में आपत्ति
6-69) अभेद पक्ष में दृष्टान्त
6-70) उपसंहार
6-71) सर्वथा भेदपक्ष में दूषण
6-72) प्रमाण और फल को समवाय सम्बन्ध मानने में दोष
6-73) अपने पक्ष के साधन और परपक्ष के दूषण व्यवस्था
6-74) संभवदन्यद्विचारणीयम् ॥74॥
6-75) उपसंहार

!! श्रीसर्वज्ञवीतरागाय नम: !!
आचार्य माणिक्यनंदि-देव-विरचित
श्री
परीक्षामुख
मूल संस्कृत सूत्र
!! नम: श्रीसर्वज्ञवीतरागाय !!
ओंकारं बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नम: ॥1॥
अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतलकलंका
मुनिभिरूपासिततीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितान् ॥2॥
अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जनशलाकया
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नम: ॥3॥
॥ श्रीपरमगुरुवे नम:, परम्पराचार्यगुरुवे नम: ॥
सकलकलुषविध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं, भव्यजीवमन: प्रतिबिधकारकं, पुण्यप्रकाशकं, पापप्रणाशकमिदं शास्त्रं श्रीपरीक्षामुख नामधेयं, अस्य मूलाग्रन्थकर्तार: श्रीसर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रन्थकर्तार: श्रीगणधरदेवा: प्रतिगणधरदेवास्तेषां वचनानुसारमासाद्य आचार्य श्रीमाणिक्यनंदिदेव विरचितं, श्रोतार: सावधानतया शृणवन्तु ॥
मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम् ॥
सर्वमंगलमांगल्यं सर्वकल्याणकारकं
प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं जयतु शासनम् ॥

मंगलाचरण

प्रमाणादर्थसंसिद्धिस्तदाभासाद्विपर्ययः ।
इति वक्ष्ये तयोर्लक्ष्म सिद्धमल्पं लघीयसः ॥
अन्वयार्थ : [प्रमाणात्] प्रमाण से (अर्थात् सम्यग्ज्ञान से) [अर्थसंसिद्धि:] अर्थ की सम्यक् प्रकार सिद्धि होती है तथा [तदाभासात्] उसके आभास से (प्रमाणाभास / मिथ्याज्ञान से) [विपर्ययः] विपरीत होता है, इष्ट की संसिद्धि नहीं होती है [इति] इसलिए [तयोः] उन दोनों - (प्रमाण और प्रमाणाभास) के [सिद्धिम्] पूर्वाचार्यों से प्रसिद्ध एवं पूर्वापर विरोध से रहित [अल्पं] संक्षिप्त [लक्ष्म] लक्षण को [लघीयसः] लघुजनों (अल्पबुद्धियों) के हितार्थ [वक्ष्ये] मैं (आचार्य माणिक्यनन्दि) कहूँगा।

प्रमाण का लक्षण

स्वापूर्वार्थव्यवसायात्मकं ज्ञानं प्रमाणम् ॥1॥
अन्वयार्थ : स्व अर्थात् अपने आपको और 'अपूर्वार्थ' अर्थात् जिसे किसी अन्य प्रमाण से जाना नहीं है, ऐसे पदार्थ का निश्चय करनेवाले ज्ञान को प्रमाण कहते हैं ।

प्रमाण-लक्षण में ज्ञान विशेषण की सार्थकता

हिताहितप्राप्तिपरिहारसमर्थं हि प्रमाणं ततो ज्ञानमेव तत् ॥2॥
अन्वयार्थ : जो हित की प्राप्ति और अहित का परिहार कराने में समर्थ है वही प्रमाण है और वह ज्ञान ही हो सकता है ।

प्रमाण का निश्चायकपना

तन्निश्चयात्मकं समारोपविरुद्धत्वादनुमानवत् ॥3॥

अन्वयार्थ : वह प्रमाण पदार्थ का निश्चयात्मक है, समारोप (संशय, विपर्यय, अनध्यवसाय) का विरोधी होने से, अनुमान की तरह ।

अपूर्वार्थ का लक्षण

अनिश्चितोऽपूर्वार्थ: ॥4॥

अन्वयार्थ : जिस पदार्थ का पहले किसी प्रमाण से निश्चय न किया गया हो, वह अपूर्वार्थ कहलाता है ।

अपूर्वार्थ का दूसरा लक्षण

दृष्टोऽपि समारोपात्तादृक् ॥5॥

अन्वयार्थ : पूर्व में देखे हुए पदार्थ में भी यदि समारोप अर्थात् संशय, विपर्यय, अनध्यवसाय आ जाता है तो वह पदार्थ भी अपूर्वार्थ बन जाता है । (जैसे पढी हुई पुस्तक अनभ्यास से पुन: अपठित जैसी हो जाती है।)

स्वव्यवसाय का स्वरूप

स्वोन्मुखतया प्रतिभासनं स्वस्य व्यवसाय: ॥6॥

अन्वयार्थ : स्वयं की तरफ सन्मुख होने से जो अनुभवन होता है, वही स्व-व्यवसाय कहलाता है।

स्वव्यवसाय का दृष्टान्त

अर्थस्येव तदुन्मुखतया ॥7॥

अन्वयार्थ : जिसप्रकार पदार्थ के प्रति सन्मुख होने से पदार्थ का निश्चय होता है अर्थात् ज्ञान होता है, उसीप्रकार स्व की ओर उन्मुख होने पर स्व का निश्चय होता है।

पदार्थ को जानते समय ज्ञान में प्रतीति

घटमहमात्मना वेद्मि ॥8॥

अन्वयार्थ : घट को मैं (आत्मा) अपने (ज्ञान) द्वारा जानता हूँ। यहाँ जैसे 'घटङ्क पदार्थ रूप कर्म का प्रत्यक्ष होता है। वैसे ही कर्ता-आत्मा,करण-ज्ञान और जानने रूप क्रिया इन तीनों का प्रतीतिरूप प्रत्यक्ष होता है।

कर्मवत्कर्तृकरणक्रियाप्रतीते: ॥9॥

अन्वयार्थ : कर्म के समान कर्ता, करण और क्रिया की भी प्रतीति होती है ।

शब्दोच्चारण बिना ही स्वव्यवसायकता

शब्दानुच्चारणेऽपि स्वस्यानुभवनमर्थवत् ॥10॥

अन्वयार्थ : शब्दों का उच्चारण किये बिना भी अपना अनुभव होता है। जैसे पदार्थों का घट आदि रूप वचन बोले बिना भी उसका ज्ञान होता है।

स्वप्रतीति की पुष्टि व उदाहरण

को वा तत्प्रतिभासिनमर्थध्यक्षमिच्छंस्तदेव तथा नेच्छेत् ॥11॥

अन्वयार्थ : ऐसा कौन (लौकिक या परीक्षक) पुरुष है जो ज्ञान के द्वारा अनुभव हुए पदार्थ को तो प्रत्यक्ष माने और उस ज्ञान को ही प्रत्यक्ष न माने अर्थात् उसे अवश्य ही ज्ञान को प्रत्यक्ष मानना चाहिए।

प्रदीपवत् ॥12॥

अन्वयार्थ : दीपक के समान।

प्रमाण के प्रामाण्य का निर्णय

तत्प्रामाण्यं स्वत: परश्च ॥13॥

अन्वयार्थ : उस प्रमाण की प्रामाणिकता कहीं स्वत: होती है और कहीं पर से भी होती है।

प्रमाण के भेद

तद्द्वेधा ॥1॥

अन्वयार्थ : वह प्रमाण दो प्रकार का है।

भेदों का स्पष्टीकरण

प्रत्यक्षेतरभेदात् ॥2॥

अन्वयार्थ : प्रत्यक्ष और इतर अर्थात् परोक्ष के भेद से प्रमाण दो प्रकार का होता है।

प्रत्यक्ष प्रमाण का स्वरूप

विशदं प्रत्यक्षम् ॥3॥

अन्वयार्थ : विशद अर्थात् निर्मल और स्पष्ट ज्ञान को प्रत्यक्ष कहते हैं।

वैशद्य का स्वरूप

प्रतीत्यन्तराव्यवधानेन विशेषवत्तया वा प्रतिभासनं वैशद्यम् ॥4॥

अन्वयार्थ : दूसरे ज्ञान के व्यवधान से रहित और विशेषता से होनेवाले प्रतिभास को वैशद्य कहा जाता है।

सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष का लक्षण

इन्द्रियानिन्द्रियानिमित्तं देशत: सांव्यवहारिकम् ॥5॥

अन्वयार्थ : इन्द्रिय और मन के निमित्त से होनेवाले एकदेश विशद ज्ञान को सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष कहते हैं।

पदार्थ और प्रकाश के ज्ञानकारणता के निषेध में तर्क

नार्थालोकौ कारणं परिच्छेद्यत्वात्तमोवत् ॥6॥

अन्वयार्थ : पदार्थ व प्रकाश सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष के कारण नहीं हैं,क्योंकि ये परिच्छेद्य अर्थात् ज्ञान के विषय हैं-जाननेयोग्य ज्ञेय हैं। जो ज्ञान का विषय होता है, वह ज्ञान का कारण नहीं होता, जैसे अन्धकार।

इसी बात को उदाहरण से सतर्क स्पष्ट करते हैं

तदन्वयव्यतिरेकानुविधानाभावाच्च केशोण्डुकज्ञानवन्नक्तंचर ज्ञानवच्च ॥7॥

अन्वयार्थ : पदार्थ और प्रकाश ज्ञान के कारण नहीं, क्योंकि ज्ञान का पदार्थ और प्रकाश के साथ अन्वय-व्यतिरेक रूप संबंध का अभाव है। जैसे, केश में भ्रम से होनेवाले मच्छर ज्ञान के साथ तथा नक्तंचर अर्थात् रात्रि में चलनेवाले उलूक आदि को रात्रि में होनेवाले ज्ञान के साथ देखा जाता है।

ज्ञान के अर्थजन्यता और अर्थाकारता का खण्डन

अतज्जन्यमपि तत्प्रकाशकं प्रदीपवत् ॥8॥

अन्वयार्थ : पदार्थ से उत्पन्न नहीं होकर भी ज्ञान पदार्थ का प्रकाशक होता है, दीपक के समान।

ज्ञान के विषय की निश्चित व्यवस्था

स्वावरणक्षयोपशमलक्षणयोग्यतया हि प्रतिनियतमर्थं व्यवस्थापयति ॥9॥

अन्वयार्थ : अपने आवरण कर्म के (ज्ञानावरण, वीर्यान्तराय) क्षयोपशम लक्षणवाली योग्यता प्रत्यक्ष प्रमाण प्रतिनियत पदार्थों के जानने की व्यवस्था करता है।

कारणस्य च परिच्छेद्यत्वे करणादिना व्यभिचार: ॥10॥

अन्वयार्थ : कारण को परिच्छेद्य अर्थात् ज्ञेय मानने पर करण अर्थात् इन्द्रियों के साथ व्यभिचार दोष आता है।

मुख्य प्रत्यक्ष का स्वरूप

सामग्रीविशेषविश्लेषिताखिलावरणमतीन्द्रियशेषतो मुख्यम् ॥11॥

अन्वयार्थ : सामग्री की विशेषता से विश्लेषित अर्थात् दूर हो गये हैं,समस्त आवरण जिसके ऐसे अतीन्द्रिय और पूर्णरूप से विशद ज्ञान को मुख्य प्रत्यक्ष कहते हैं।

अतीन्द्रिय व अनावरणत्व विशेषण की सार्थकता

सावरणत्वे करणजन्यत्वे च प्रतिबंधसम्भवात् ॥12॥

अन्वयार्थ : आवरण सहित होने पर और इन्द्रिय के द्वारा उत्पन्न होने पर प्रतिबंध सम्भव है।

परोक्ष का लक्षण और निर्णय -

परोक्षमितरत् ॥1॥

अन्वयार्थ : [इतरत्] (प्रत्यक्ष से) भिन्न [परोक्षम्] परोक्ष है ।

परोक्ष के कारण और भेद -

प्रत्यक्षादिनिमित्तं स्मृतिप्रत्यभिज्ञानतर्कानुमानागम भेदम् ॥2॥

अन्वयार्थ : [प्रत्यक्षादिनिमित्तं] प्रत्यक्ष आदि जिसके निमित्त हैं तथा [स्मृति-प्रत्यभिज्ञान-तर्कानुमानागम] स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, तर्क, अनुमान और आगम [भेदम्] (ऐसे पाँच) भेद वाला (परोक्षज्ञान है) ।

स्मृति-प्रमाण का लक्षण वा कारण -

संस्कारोद्बोधनिबन्धना तदित्याकारा स्मृतिः ॥3॥

अन्वयार्थ : [संस्कारोद्बोधनिबन्धना] धरणारूप संस्कार की प्रकटता के निमित्त से होने वाले और [तदित्याकारा] इस प्रकार के आकार वाले ज्ञान को [स्मृतिः] स्मृति कहते हैं ।

स्मृति का दृष्टान्त -

स देवदत्तो यथा ॥4॥

अन्वयार्थ : [यथा] जैसे [सः] वह [देवदत्तः] देवदत्त है ।

प्रत्यभिज्ञान का लक्षण वा स्वरूप -

दर्शनस्मरणकारकं सङ्कलनं प्रत्यभिज्ञानं, तदेवेदं तत्सदृशं तद्विलक्षणं तत्प्रतियोगीत्यादि ॥5॥

अन्वयार्थ : [दर्शनस्मरणकारकं] वर्तमान में पदार्थ का दर्शन और पूर्व में देखे हुए का स्मरण ऐसे [सङ्कलनं] अनुसन्धानरूप ज्ञान को [प्रत्यभिज्ञानं] प्रत्यभिज्ञान कहते हैं । जैसे - [इदं तदेव] 'यह वही है' (एकत्व-प्रत्यभिज्ञान); [तत्सदृशं] 'उसके समान है' (सादृश्य-प्रत्यभिज्ञान); [तद्विलक्षणं] 'उससे भिन्न है' (वैलक्षण्य-प्रत्यभिज्ञान); [तत्प्रतियोगी] 'उसका प्रतियोगी है' (प्रातियोगिक-प्रत्यभिज्ञान);

[इत्यादि] इत्यादि । इसप्रकार और भी प्रत्यभिज्ञान के भेद हो सकते हैं ।

प्रत्यभिज्ञान के दृष्टान्त -

यथा स एवायं देवदत्तः, गोसदृशो गवयः, गोविलक्षणो महिषः, इदमस्माद् दूरम्, वृक्षोऽयमित्यादि ॥6॥

अन्वयार्थ : [यथा] जैसे [सः] वह [एव] ही [अयम्] यह [देवदत्तः] देवदत्त है [गोसदृशः] गाय के समान [गवयः] नीलगाय है [गोविलक्षणः] गाय से विलक्षण (भिन्न) [महिषः] भैंसा है [इदम्] यह [अस्मात्] इससे [दूरम्] दूर है [अयम्] यह [वृक्षः] वृक्ष है [इत्यादि] इत्यादि।

तर्क-प्रमाण का कारण वा लक्षण -

उपलम्भानुपलम्भनिमित्तं व्याप्तिज्ञानमूहः ॥7॥

अन्वयार्थ : [उपलम्भानुपलम्भनिमित्तं] उपलम्भ (अन्वय) और अनुपलम्भ (व्यतिरेक) हैं कारण जिसमें ऐसे [व्याप्तिज्ञानम्] व्याप्ति के ज्ञान को [ऊहः] तर्क (तर्क-प्रमाण) कहते हैं।

व्याप्तिज्ञान की प्रवृत्ति का प्रकार -

इदमस्मिन्सत्येव भवत्यसति तु न भवत्येव ॥8॥

यथाऽग्नावेव धूमस्तदभावे न भवत्येवेति च ॥9॥

अन्वयार्थ : [इदम्] यह [अस्मिन्] इसके [सति] होने पर [एव] ही [भवति] होता है [तु] किन्तु [असति] नहीं होने पर [न] नहीं [एव] ही [भवति] होता है । [यथा] जैसे [अग्नौ] अग्नि के होने पर [एव] ही [धूम] धुआँ होता है [च] और [तदभावे] उसके अभाव में [न] नहीं [एव] ही [भवति] होता है, [इति] इस प्रकार (जानना) । (यह साधनरूप वस्तु इस साध्यरूप वस्तु के होने पर ही होती है और साध्यरूप वस्तु के नहीं होने पर नहीं होती है जैसे- अग्नि के होने पर ही धूम होता है और अग्नि के अभाव में धूम नहीं होता है ।)

अनुमान का कारण और स्वरूप -

साधनात् साध्यविज्ञानमनुमानम् ॥10॥

अन्वयार्थ : [साधनात्] साधन से [साध्यविज्ञानम्] साध्य का विशिष्ट ज्ञान [अनुमानम्] अनुमान कहलाता है।

हेतु (साधन) का लक्षण -

साध्याविनाभावित्वेन निश्चितो हेतुः ॥11॥

अन्वयार्थ : [साध्याविनाभावित्वेन] साध्य के साथ जिसका अविनाभाव [निश्चितः] निश्चित हो, अर्थात् जो साध्य के बिना न हो, उसे [हेतुः] हेतु (साधन) कहते हैं।

अविनाभाव के भेद -

सहक्रमभावनियमोऽविनाभावः ॥12॥

अन्वयार्थ : [सहक्रमभावनियमः] सहभाव नियम और क्रमभाव नियम को [अविनाभावः] अविनाभाव कहते हैं।

सहभाव-नियम का लक्षण -

सहचारिणोर्व्याप्यव्यापकयोश्च सहभावः ॥13॥

अन्वयार्थ : [सहचारिणोः] सहचारी (सदा साथ रहने वाले) में [च] और [व्याप्यव्यापकयोः] व्याप्य-व्यापक पदार्थों में [सहभावः] सहभाव नियम होता है।

क्रमभाव-नियम का लक्षण -

पूर्वोत्तरचारिणोः कार्यकारणयोश्च क्रमभावः ॥14॥

अन्वयार्थ : [पूर्वोत्तरचारिणोः] पूर्वचर और उत्तरचर में [च] तथा [कार्यकारणयोः] कार्य और कारण में [क्रमभावः] क्रमभाव-नियम होता है।

व्याप्तिज्ञान (अविनाभाव) के निर्णय का कारण -

तर्कात्तन्निर्णयः ॥15॥

अन्वयार्थ : [तर्कात्] तर्क प्रमाण से [तन्निर्णयः] उस अविनाभाव का निर्णय (निश्चय, परिज्ञान) होता है।

साध्य का स्वरूप -

इष्टमबाधितमसिद्धं साध्यम् ॥16॥

अन्वयार्थ : [इष्टमबाधितमसिद्धं] इष्ट (अभिप्रेतद्ध, अबाधित (बाध-रहित) और असिद्ध (पदार्थ) को [साध्यम्] साध्य कहते हैं।

साध्य के लक्षण में असिद्ध विशेषण की सार्थकता -

संदिग्धविपर्यस्ताव्युत्पन्नानां साध्यत्वं यथास्यादित्यसिद्धपदम् ॥17॥

अन्वयार्थ : [संदिग्धविपर्यस्ताव्युत्पन्नानां] संदिग्ध, विपर्यस्त (विपरीत), अव्युत्पन्न पदार्थों के [साध्यत्वं] साध्यपना [यथा] जिस प्रकार से [स्यात्] हो (माना जा सके) [इति] इसलिए साध्य के लक्षण में [असिद्धपदम्] असिद्ध पद दिया है ।

साध्य के लक्षण में इष्ट और अबाधित पदों का सार्थक्य -

अनिष्टाध्यक्षादिबाधितयोः साध्यत्वं मा भूदितीष्टाबाधितवचनम् ॥18॥

अन्वयार्थ : [अनिष्टाध्यक्षादिबाधितयोः] अनिष्ट और प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से बाधित पदार्थों के [साध्यत्वं] साध्यपना [मा भूत्] न माना जाये, [इति] इसलिए (साध्य को) [इष्टाबाधितवचनं] इष्ट और अबाधित - ये दो वचन (विशेषण) - दिये गये हैं।

साध्य का इष्ट विशेषण वादी की अपेक्षा से होता है -

न चासिद्धवदिष्टं प्रतिवादिनः ॥19॥

अन्वयार्थ : [च] और [असिद्धवत्] असिद्ध (विशेषण) के समान [इष्टं] इष्ट (विशेषण) [प्रतिवादिनः] प्रतिवादी की अपेक्षा से [न] नहीं है।

इष्ट विशेषण वादी की अपेक्षा होने का कारण -

प्रत्यायनाय हीच्छा वक्तुरेव ॥20॥

अन्वयार्थ : (क्योंकि) [प्रत्यायनाय] दूसरे को समझाने के लिए [हि] निश्चय से [इच्छा] इच्छा [वक्तुः] वक्ता (अर्थात् वादी) के [एव] ही होती है।

साध्य का निर्णय -

साध्यं धर्मः क्वचित्तद्विशिष्टो वा धर्मी ॥21॥

अन्वयार्थ : [क्वचित्] कहीं पर [धर्मः] धर्म [साध्यं] साध्य होता है [वा] अथवा (कहीं पर) [तद्विशिष्टः] उस धर्म से विशिष्ट (युक्त) [धर्मी] धर्मी साध्य होता है।

धर्मी का नामान्तर -

पक्ष इति यावत् ॥22॥

अन्वयार्थ : [पक्षः] पक्ष [इति] इस प्रकार है [यावत्] जैसा धर्मी। (उसी धर्मी को पक्ष कहते हैं। पक्ष इस प्रकार धर्मी का ही पर्यायवाची नाम है।)

पक्ष की प्रसिद्धता या लक्षण -

प्रसिद्धो धर्मी ॥23॥

अन्वयार्थ : [धर्मी] धर्मी [प्रसिद्धः] प्रसिद्ध अर्थात् प्रमाण से सिद्ध (काल्पनिक नहीं) होता है।

विकल्पसिद्ध धर्मी में साध्य का नियम -

विकल्पसिद्धे तस्मिन् सत्तेतरे साध्ये ॥24॥

अन्वयार्थ : [तस्मिन् विकल्पसिद्धे] उस विकल्पसिद्ध धर्मी में [सत्तेतरे] सत्ता और इतर (असत्ता) [साध्ये] दोनों ही साध्य हैं।

विकल्पसिद्ध धर्मी का उदाहरण -

अस्ति सर्वज्ञो नास्ति खरविषाणम् ॥25॥

अन्वयार्थ : [सर्वज्ञः] सर्वज्ञ [अस्ति] है [खरविषाणम्] खर-विषाण (गध्े के सींग) [नास्ति] नहीं है।

प्रमाणसिद्ध धर्मी और विकल्पसिद्ध धर्मी मंे साध्य -

प्रमाणोभयसिद्धे तु साध्यधर्मविशिष्टता ॥26॥

अन्वयार्थ : [प्रमाणोभयसिद्धे] प्रमाणसिद्ध धर्मी और उभयसिद्ध (प्रमाणविकल्पसिद्ध) धर्मी में [तु] तो [साध्यधर्मविशिष्टता] साध्य धर्म से विशिष्टता अर्थात् संयुत्तफता साध्य होती है।

प्रमाणसिद्ध और विकल्पसिद्ध धर्मी के दृष्टान्त -

अग्निमानयं देशः परिणामी शब्द इति यथा ॥27॥

अन्वयार्थ : [यथा] जैसे [अयम्] यह [देशः] प्रदेश [अग्निमान्] अग्नि वाला है [इति] और इसी प्रकार [शब्दः] शब्द [परिणामी] परिणामी है।

व्याप्तिकाल में साध्य का नियम -

व्याप्तौ तु साध्यं धर्म एव ॥28॥

अन्वयार्थ : [व्याप्तौ] व्याप्तिकाल में [तु] तो [धर्मः] धर्म [एव] ही [साध्यं] साध्य होता है।

व्याप्तिकाल में धर्मी को साध्य मानने से हानि -

अन्यथा तदघटनात् ॥29॥

अन्वयार्थ : [अन्यथा] अन्यथा [तत्] वह (व्याप्ति) [अघटनात्] घटित नहीं हो सकती है (दोष आता हैद्ध।

पक्ष का प्रयोग करने की आवश्यकता -

साध्यधर्माधारसन्देहापनोदाय गम्यमानस्यापि पक्षस्य वचनम् ॥30॥

अन्वयार्थ : [साध्यधर्माधारसन्देहापनोदाय] साध्य धर्म के आधर के विषय में सन्देह को दूर करने के लिए [गम्यमानस्य पक्षस्य] गम्यमान (स्वतः सिद्ध) पक्ष का [अपि] भी [वचनम्] वचन प्रयोग किया जाता है।

पक्ष का प्रयोग करने की आवश्यकता का दृष्टान्त -

साध्यधर्मिणि साधनधर्मावबोधनाय पक्षधर्मोपसंहारवत् ॥31॥

अन्वयार्थ : (जैसे) [साध्यधर्मिणि] साध्य से युक्त धर्मी में [साधनधर्मावबोधनाय] साधन-धर्म के ज्ञान कराने के लिए [पक्षधर्मोपसंहारवत्] पक्षधर्म के उपसंहाररूप उपनय का प्रयोग किया जाता है।

पक्ष के प्रयोग की आवश्यकता की पुष्टि -

को वा त्रिधा हेतुमुक्त्वा समर्थयमानो न पक्षयति ॥32॥

अन्वयार्थ : [वा] अथवा [कः] कौन है जो [त्रिधा] तीन प्रकार के [हेतुम्] हेतु को [उक्त्वा] कह करके [समर्थयमानः] उसका समर्थन करता हुआ भी [पक्षयति] पक्ष का प्रयोग [न] न करे?

अनुमान के अंगों का निर्णय -

एतद्-द्वयमेवानुमानाङ्गं नोदाहरणम् ॥33॥

अन्वयार्थ : [एतत्] ये [द्वयम्] दोनों - पक्ष और हेतु - [एव] ही [अनुमानाङ्गं] अनुमान के अंग हैं, [उदाहरणम्] उदाहरणादिक [न] नहीं।

उदाहरण का अनुमान का अंग न होने में कारण -

न हि तत्साध्यप्रतिपत्त्यङ्गं तत्र यथोक्त हेतोरेव व्यापारात् ॥34॥

अन्वयार्थ : [तत्साध्यप्रतिपत्त्यङ्गं] वह (उदाहरण) साध्य के ज्ञान में कारण [न] नहीं है [हि] क्योंकि [तत्र] वहाँ साध्य के ज्ञान में [यथोक्त] यथोक्त (अर्थात् साध्य के साथ अविनाभावरूप से निश्चित) [हेतोः] हेतु का [एव] ही [व्यापारात्] व्यापार होता है।

उदाहरण की आवश्यकता का खण्डन -

तदविनाभावनिश्चयार्थं वा विपक्षे बाधकप्रमाणबलादेव तत्सिद्धेः ॥35॥

अन्वयार्थ : [तदविनाभावनिश्चयार्थं] वह उदाहरण अविनाभाव के निश्चय के लिए भी कारण नहीं है [वा] क्योंकि [विपक्षे] विपक्ष में [बाधकप्रमाणबलात्] बाधक-प्रमाण के बल से [एव] ही [तत्] वह (अविनाभाव) [सिद्धेः] सिद्ध हो जाता है।

व्यक्तिरूपं च निदर्शनं सामान्येन तु व्याप्तिस्तत्रापि तद्विप्रतिपत्तावनवस्थानं स्याद् दृष्टान्तान्तरापेक्षणात् ॥36॥

अन्वयार्थ : [निदर्शनं] निदर्शन (उदाहरण) [व्यक्तिरूपं] व्यक्तिरूप होता है [तु] परन्तु [व्याप्तिः] व्याप्ति [सामान्येन] सामान्यरूप से (सर्वदेश काल की उपसंहार वाली) होती है [तत्रापि] उस उदाहरण में भी [च] और [तद्विप्रतिपतौ] उस सामान्य व्याप्ति में विवाद होने पर [दृष्टान्तान्तरापेक्षणात्] दृष्टान्त को अन्य दृष्टान्त की अपेक्षा होने से [अनवस्थानम्] अनवस्था दोष प्राप्त होगा।

नापि व्याप्तिस्मरणार्थं तथाविधहेतुप्रयोगादेव तत्स्मृतेः ॥37॥

अन्वयार्थ : [व्याप्तिस्मरणार्थं] व्याप्ति का स्मरण करने के लिए [अपि] भी [न] उदाहरण की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि [तथाविधहेतुप्रयोगात्] उस प्रकार के (साध्य के साथ अविनाभावरूप) हेतु के प्रयोग से [एव] ही [तत्स्मृतेः] उस (व्याप्ति का) स्मरण हो जाता है।

उदाहरण-प्रयोग से हानि -

तत्परमभिधीयमानं साध्यधर्मिणि साध्यसाधने सन्देहयति ॥38॥

अन्वयार्थ : [तत्परमभिधीयमानं] (उपनय और निगमन के बिना) उस उदाहरण मात्रा का कहा जाना [साध्यधर्मिणि] साध्यधर्म वाले धर्मी (पक्ष) में [साध्यसाधने] साध्य के सिद्ध करने में [संदेहयति] संदेह करा देता है।

केवल उदाहरण-प्रयोग से सन्देह

कुतोऽन्यथोपनयनिगमने ॥39॥

अन्वयार्थ : [अन्यथा] अन्यथा [उपनयनिगमने] उपनय और निगमन [कुतः] किस कारण से प्रयोग में लाये जाते?

उपनय और निगमन अनुमानाङ्ग नहीं

न च ते तदङ्गे, साध्यधर्मिणि हेतुसाध्ययोर्वचनादेवासंशयात् ॥40॥

अन्वयार्थ : [साध्यधर्मिणि] साध्यधर्म वाले धर्मी (पक्ष) में [हेतुसाध्ययोः] हेतु और साध्य के [वचनात्] वचन से [एव] ही [असंशयात्]

संशय नहीं होने से [ते च] वे - उपनय और निगमन - भी [तदङ्गे] उस (अनुमान के) अंग [न] नहीं हैं।

हेतु आवश्यक; उदाहरण अनावश्यक

समर्थन वा वरं हेतुरूपमनुमानावयवो वाऽस्तु साध्ये तदुपयोगात् ॥41॥

अन्वयार्थ : [समर्थनं] समर्थन [वा] ही [वरं] श्रेष्ठ/वास्तविक [हेतुरूपम्] हेतु का स्वरूप है और [तत्] वही (समर्थन) [अनुमानावयवः] अनुमान का अवयव [अस्तु] होता है [वा] क्योंकि [साध्ये] साध्य की सिद्धि में [उपयोगात्] उसी का उपयोग होता है।

उदाहरण, उपनय और निगमन की आवश्यकता

बालव्युत्पत्त्यर्थं तत्त्रायोपगमे शास्त्रा एवासौ न वादेऽनुपयोगात् ॥42॥

अन्वयार्थ : [बालव्युत्पत्त्यर्थं] मंदबुद्धि वाले बालकों (अल्पज्ञानियों) की व्यत्पुत्ति के लिए (ज्ञान कराने के लिए) [तत्त्रायोपगमे] उन तीन - उदाहरण, उपनय, निगमन - अवयवों को मान लेने पर भी [शास्त्रा] शास्त्रा में [एव] ही [असौ] उनकी स्वीकारता है, [वादे] वाद में [न] नहीं, क्योंकि वाद में [अनुपयोगात्] उनका उपयोग नहीं है। (वाद करने का अधकिार विद्वानों को ही होता है और वे पहले से ही व्युत्पन्न रहते हैं, इसलिए उनको उदाहरणादि का प्रयोग उपयोगी नहीं होता।)

दृष्टान्त के भेद

दृष्टान्तो द्वेधा अन्वयव्यतिरेकभेदात् ॥43॥

अन्वयार्थ : [दृष्टान्तः] दृष्टान्त [द्वेधा] दो प्रकार का होता है - [अन्वयव्यतिरेकभेदात्] अन्वय और व्यतिरेक के भेद से।

अन्वय-दृष्टान्त का लक्षण

साध्यव्याप्तं साधनं यत्रा प्रदर्श्यते सोऽन्वयदृष्टान्तः ॥44॥

अन्वयार्थ : [साध्यव्याप्तं] साध्य से व्याप्त [साधनम्] साधन को [यत्रा] जहाँ [प्रदर्श्यते] दिखाया जाता है, [सः] वह [अन्वयदृष्टान्तः] अन्वय-दृष्टान्त है। (साध्य के साथ जहाँ साधन की व्याप्ति दिखलाई जाती है, वह अन्वय-दृष्टान्त है।)

व्यतिरेक-दृष्टान्त का स्वरूप

साध्याभावे साधनाभावो यत्र कथ्यते स व्यतिरेकदृष्टान्तः ॥45॥

अन्वयार्थ : [यत्र] जहाँ [साध्याभावे] साध्य के अभाव में [साधनाभावः] साधन का अभाव [कथ्यते] कहा जाता है, [सः] वह [व्यतिरेकदृष्टान्तः] व्यतिरेक-दृष्टान्त है।

उपनय का लक्षण

हेतोरुपसंहार उपनयः ॥46॥

अन्वयार्थ : [हेतोः] हेतु का [उपसंहारः] उपसंहार (दुहराना) [उपनयः] उपनय कहलाता है। (पक्ष में हेतु का उपसंहार उपनय कहलाता है।)

निगमन का स्वरूप

प्रतिज्ञायास्तु निगमनम् ॥47॥

अन्वयार्थ : [तु] दूसरी ओर [प्रतिज्ञायाः] प्रतिज्ञा के उपसंहार (दुहराने) को [निगमनम्] निगमन कहते हैं।

अनुमान के भेद

तदनुमानं द्वेधा ॥48॥

अन्वयार्थ : [तत्] वह [अनुमानं] अनुमान [द्वेधा] दो प्रकार का है।

अनुमान के दो भेदों का स्पष्टीकरण

स्वार्थपरार्थभेदात् ॥49॥

अन्वयार्थ : [स्वार्थपरार्थभेदात्] एक स्वार्थानुमान और दूसरा परार्थानुमान।

स्वार्थानुमान का लक्षण

स्वार्थमुक्तलक्षणम् ॥50॥

अन्वयार्थ : [स्वार्थम्] स्वार्थानुमान [उक्त] कह दिये गये [लक्षणम्] लक्षण वाला है।

परार्थानुमान का लक्षण

परार्थं तु तदर्थपरामर्शिवचनाज्जातम् ॥51॥

अन्वयार्थ : [तु] परन्तु [तदर्थपरामर्शिवचनात्] उस स्वार्थानुमान के विषयभूत अर्थ का परामर्श (निर्णय/निश्चय) करने वाले वचनों से जो ज्ञान [जातम्] उत्पन्न होता है उसे [परार्थं] परार्थानुमान कहते हैं।

परार्थानुमान-प्रतिपदाक वचन के परार्थानुमानपना

तद्वचनमपि तद्धेतुत्वात् ॥52॥

अन्वयार्थ : [तद्धेतुत्वात्] उस परार्थानुमान का हेतु/कारण होने से [तत्] उस (परार्थानुमान के प्रतिपादक) [वचनम्] वचन को [अपि] भी परार्थनुमान कहते हैं।

हेतु के भेद

स हेतुर्द्वेधोपलब्ध्यनुपलब्धिभेदात् ॥53॥

अन्वयार्थ : [सः] वह [हेतुः] (अविनाभाव लक्षण वाला) हेतु [द्वेधा] दो प्रकार का है- [उपलब्ध्यनुपलब्धिभेदात्] एक उपलब्धिरूप हेतु और दूसरा अनुपलब्धिरूप हेतु।

उपलब्धिरूप और अनुपलब्धिरूप हेतु के विषय

उपलब्धिर्विधिप्रतिषेधयोरनुपलब्धिश्च ॥54॥

अन्वयार्थ : [उपलब्धि:] उपलब्धिरूप हेतु [च] और [अनुपलब्धि:] अनुपलब्धिरूप हेतु [विधिप्रतिषेध्योः] विधि और प्रतिषेध् दोनों के साधक हैं।

अविरुद्धोपलब्धि हेतु के छह भेद

अविरुद्धोपलब्धिर्विधौ षोढा-व्याप्यकार्यकारणपूर्वोत्तरसहचरभेदात् ॥55॥

अन्वयार्थ : [विधौ] विधि-साधन की दशा में [अविरुद्धोपलब्धि:] अविरुद्धोपलब्धि [षोढा] छह प्रकार की है- [व्याप्यकार्यकारण-पूर्वोत्तरसहचरभेदात्] 1) अविरुद्धव्याप्योपलब्धि, 2) अविरुद्ध- कार्योपलब्धि, 3) अविरुद्धकारणोपलब्धि, 4) अविरुद्धपूर्वचरोपलब्धि, 5) अविरुद्धोत्तरचरोपलब्धि और 6) अविरुद्धसहचरोपलब्धि। (साध्य से व्याप्यस्वरूप, साध्य का कार्य, साध्य का कारण, साध्य से पूर्वचर, साध्य से उत्तरचर, और साध्य का सहचर।)

कारण-हेतु के विधिसाधकपना

रसादेकैंची रूपानुमानमिच्छद्भिरिष्टमेव किञ्चित् कारणं हेतुर्यत्र सामर्थ्याप्रतिबन्धकारणान्तरावैकल्ये ॥56॥

अन्वयार्थ : [यत्र] जिसमें [सामर्थ्याप्रतिबन्धकारणान्तरावैकल्ये] सामर्थ्य की रुकावट नहीं है और अन्य कारणों की विकलता (कमी) नही है, ऐसे [रसात्] रस से [एकसामग्र्यनुमानेन] एक सामग्री के अनुमान द्वारा [रूपानुमानम्] रूप का अनुमान [इच्छद्भि] चाहने वाले (बौद्धों

के द्वारा) [किञ्चित् कारणं] कोई विशिष्ट कारणरूप [हेतुः] हेतु [इष्टं एव] स्वीकार किया गया ही है। (रस से एक सामग्री के अनुमान द्वारा रूप का अनुमान स्वीकार करने वाले बौद्धों ने कोई विशिष्ट कारण रूप हेतु माना ही है, जिसमें सामर्थ्य का प्रतिबन्ध् नहीं है और दूसरे कारणों की विकलता नहीं है।)

पूर्वचर और उत्तरचर हेतुओं की अन्य हेतुओं से भिन्नता

न च पूर्वोत्तरचारिणोस्तादात्म्यं तदुत्पत्तिर्वा कालव्यवधाने तदनुपलब्धेः ॥57॥

अन्वयार्थ : [पूर्वोत्तरचारिणोः] पूर्वचर और उत्तरचर हेतुओं का साध्य के साथ [तादात्म्यं] तादात्म्य सम्बन्ध् [च] और [तदुत्पत्तिः] तदुत्पत्ति सम्बन्ध् [न] नहीं है [वा] क्योंकि [कालव्यवधाने] काल का व्यवधान होने पर [तदनुपलब्धेः] उन दोनों सम्बन्धें की साध्य के साथ उपलब्धि नहीं है। (पूर्वचर और उत्तरचर हेतुओं का साध्य के साथ तादात्म्य सम्बन्ध् नहीं है अतः स्वभाव हेतु में अन्तर्भाव नहीं होता। तथा तदुत्पत्ति सम्बन्ध् भी नहीं है अतः कार्य हेतु और कारण हेतु में भी अन्तर्भाव नहीं होता; क्योंकि ये दोनों सम्बन्ध् काल के व्यवधान (अन्तराल) में नहीं होते हैं।)

काल का व्यवधान होने पर भी कार्य-कारण भाव मानने का खण्डन

भाव्यतीतयोर्मरणजाग्रद्बोधयोरपि नारिष्टोद्बोधौ प्रतिहेतुत्वम् ॥58॥

अन्वयार्थ : [भाव्यतीतयोः मरणजाग्रद्बोधयोः] भावी-मरण और अतीत-जाग्रतबोध के [अपि] भी [अरिष्टोद्बोधौ] अरिष्ट (अपशकुन) और उद्बोध के [प्रतिहेतुत्वम्] प्रति हेतुपना [न] नहीं है। (अर्थात् भावी-मरण अरिष्ट का कारण नहीं है तथा सोने के पूर्व अवस्था का ज्ञान जागने के बाद के ज्ञान / उद्बोध का कारण नहीं है।)

काल-व्यवधान होने पर भी कार्य-कारण-भाव मानने के खण्डन में हेतु

तद्-व्यापाराश्रितं हि तद्भावभावित्वम् ॥59॥

अन्वयार्थ : [हि] क्योंकि [तद्-व्यापाराश्रितं] उस कारण के व्यापार के आश्रित ही [तद्भावभावित्वम्] कार्य का व्यापार हुआ करता है।

सहचरहेतु का स्वभावहेतु और कार्यहेतु से पृथक्पन

सहचारिणोरपि परस्परपरिहारेणावस्थानात्सहोत्पादाच्च ॥60॥

अन्वयार्थ : [सहचारिणः] सहचारी पदार्थ के [अपि] भी [परस्पर-परिहारेण] परस्पर के परिहार से [अवस्थानात्] अवस्थित रहने से सहचरहेतु का स्वभावहेतु में अन्तर्भाव नहीं हो सकता [च] और [सहोत्पादात्] एक साथ उत्पन्न होने से कार्यहेतु और कारणहेतु में अन्तर्भाव नहीं हो सकता।

अविरुद्धव्याप्योपलब्धि का उदाहरण

परिणामी शब्दः, कृतकत्वात् । य एवं स एवं दृष्टो यथा घटः । कृतकश्चायं, तस्मात्परिणामीति । यस्तु न परिणामी, स न कृतको दृष्टो यथा वन्ध्यास्तनन्धयः। कृतकश्चायम्, तस्मात्परिणामीति ॥61॥

अन्वयार्थ : [शब्दः] शब्द [परिणामी] परिणामी है (-प्रतिज्ञा), [कृतकत्वात्] क्योंकि वह कृतक है (-हेतु) । [यः] जो [एवं] इस प्रकार कृतक होता है [सः] वह [एवं] इस प्रकार परिणामी [दृष्टः] देखा जाता है, [यथा] जैसे [घटः] घट (अन्वय दृष्टान्त) । [च] और [अयं] यह शब्द [कृतकः] कृतक है (-उपनय) । [तस्मात्] उस कारण से [परिणामीति] परिणामी है (-निगमन) । [तु] परन्तु [यः] जो [इति] इस प्रकार [परिणामी] परिणामी [न] नहीं होता है [सः] वह [कृतकः] कृतक [न] नहीं [दृष्टः] देखा जाता है [यथा] जैसे [वन्ध्यास्तनन्धयः] बन्ध्या का पुत्र (-व्यतिरेक दृष्टान्त) । [च] और [अयं] यह शब्द [कृतकः] कृतक है (-उपनय) । [तस्मात्] इसलिए [परिणामीति] परिणामी है (-निगमन) ।

अविरुद्धकार्योपलब्धि (कार्यहेतु) का उदाहरण

अस्त्यत्र देहिनि बुद्धिर्व्याहारादेः ॥62॥

अन्वयार्थ : [अत्र] इस [देहिनि] देही (शरीरधारी प्राणी) में [बुद्धिः] बुद्धि [अस्ति] है [व्याहारादेः] क्योंकि बुद्धि के कार्य वचनादिक पाये जाते हैं। (यहाँ पर बुद्धि के अविरुद्ध कार्य वचनादिक की उपलब्धि है, इसलिए यह अविरुद्धकार्योपलब्धि हेतु है।)

अविरुद्धकारणोपलब्धि (कारणहेतु) का उदाहरण

अस्त्यत्रच्छाया छत्रात् ॥63॥

अन्वयार्थ : [अत्र] यहाँ पर [छाया] छाया [अस्ति] है, [छत्रात्] छत्र होने से। (यहाँ पर छाया है क्योंकि छाया का अविरोधी कारण छत्र पाया जाता है।)

अविरुद्धपूर्वचरोपलब्धि (पूर्वचरहेतु) का उदाहरण

उदेष्यति शकटं कृत्तिकोदयात् ॥64॥

अन्वयार्थ : [शकटं] (एक मुहूर्त के बाद) शकट (रोहिणी) नक्षत्रा [उदेष्यति] उदित होगा [कृत्तिकोदयात्] (क्योंकि अभी) कृत्तिका नक्षत्रा का उदय होने से।

अविरुद्ध उत्तरचरोपलब्धि (उत्तरचरहेतु) का उदाहरण

उद्गाद् भरणिः प्राक्तत एव ॥65॥

अन्वयार्थ : [भरणिः] भरणी का [उद्गाद्] उदय [प्राक्] एक मुहूर्त के पूर्व [एव] ही हो चुका है, क्योंकि [ततः] उस (कृत्तिका का) उदय पाया जाता है।

अविरुद्धसहचरोपलब्धि (सहचरहेतु) का उदाहरण

अस्त्यत्र मातुलिङ्गे रूपं रसात् ॥66॥

अन्वयार्थ : [अत्र] यहाँ [मातुलिङ्गे] बिजौरा फल में [रूपं] रूप [अस्ति] है [रसात्] रस होने से। (रस, रूप का अविरोधी सहचर है।)

प्रतिषेधरूप विरुद्धोपलब्धि हेतु के भेद

विरुद्धतदुपलब्धि: प्रतिषेधे तथा ॥67॥

अन्वयार्थ : [प्रतिषेधे] प्रतिषेध-रूप में [विरुद्धतदुपलब्धि:] वह विरुद्धोपलब्धि: [तथा] उसी प्रकार से (अर्थात् अविरुद्धोपलब्धि के समान) छह भेद वाली है ।

विरुद्धव्याप्योपलब्धि हेतु का दृष्टान्त

नास्त्यत्र शीतस्पर्श औष्ण्यात् ॥68॥

अन्वयार्थ : [अत्र] यहाँ [शीतस्पर्शः] शीतस्पर्श [नास्ति] नहीं है [औष्ण्यात्] उष्णता होने से ।

विरुद्धकार्योपलब्धि हेतु का उदाहरण

नास्त्यत्र शीतस्पर्शो धूमात् ॥69॥

अन्वयार्थ : [अत्र] यहाँ पर [शीतस्पर्शः] शीतस्पर्श [नास्ति] नहीं है [धूमात्] धुआँ होने से ।

विरुद्धकारणोपलब्धि हेतु का उदाहरण

नास्मिन् शरीरिणि सुखमस्ति हृदयशल्यात् ॥70॥

अन्वयार्थ : [अस्मिन् शरीरिणि] इस प्राणी में [सुखम्] सुख [न] नहीं [अस्ति] है [हृदयशल्यात्] हृदय में शल्य होने से ।

विरुद्धोपूर्वचरोपलब्धि हेतु

नोदेष्यति मुहूर्तान्ते शकटं रेवत्युदयात् ॥71॥

अन्वयार्थ : एक मुहूर्त के पश्चात् रोहिणी उदय नहीं होगा क्योंकि अभी रेवती नक्षत्र का उदय हो रहा है ।

विरुद्धोत्तरचरोपलब्धि हेतु

नोद्गाद् भरणि: मुहूर्तात्परं पुष्योदयात् ॥72॥

अन्वयार्थ : एक मुहूर्त पहले भरणी का उदय नहीं हुआ है, क्योंकि अभी पुष्य नक्षत्र का उदय पाया जा रहा है ।

विरुद्धोसहचरोपलब्धि हेतु

नास्त्यत्र भित्तौ परभागाभावोऽर्वाग्भागदर्शनात् ॥73॥

अन्वयार्थ : इस दीवाल में उस ओर के भाग का अभाव नहीं है क्योंकि इस ओर का भाग दिखाई दे रहा है ।

अविरुद्धानुपलब्धि के भेद

अविरुद्धानुपलब्धि: प्रतिषेधे सप्तधा स्वभाव व्यापक कार्य कारण पूर्वोत्तर सहचरानुपलम्भभेदात् ॥77॥

अन्वयार्थ : [प्रतिषेधे] प्रतिषेध अर्थात् अभाव को सिद्ध करने वाली [अविरुद्धानुपलब्धि] अविरुद्धानुपलब्धि [सप्तधा] सात [भेदात्] भेद वाली है- [स्वभावव्यापककार्यकारणपूर्वोत्तरसहचरानुपलम्भ] 1) अविरुद्धस्वभावानुपलब्धि, 2) अविरुद्धव्यापकानुपलब्धि, 3) अविरुद्धकार्यानुपलब्धि, 4) अविरुद्धकारणानुपलब्धि, 5) अविरुद्धपूर्वचरानुपलब्धि, 6) अविरुद्धोत्तरचरानुपलब्धि और 7) अविरुद्धसहचरानुपलब्धि

अविरुद्धस्वभावानुपलब्धि का उदाहरण

नास्त्यत्र भूतले घटोऽनुपलब्धेः ॥75॥

अन्वयार्थ : इस भूतल पर घट नहीं है क्योंकि उपलब्धि योग्य स्वभाव के होने पर वह भी नहीं पाया जा रहा है ।

अविरुद्धव्यापकानुपलब्धि हेतु

नास्त्यत्र शिंशपा वृक्षानुपलब्धेः ॥76॥

अन्वयार्थ : यहाँ पर शीशम नहीं है, क्योंकि वृक्ष की अनुपलब्धि है ।

अविरुद्ध कार्यानुपलब्धि हेतु

नास्त्यत्राप्रतिबद्ध-सामर्थ्योऽग्निर्धूमानुपलब्धेः ॥77॥

अन्वयार्थ : यहाँ पर अप्रतिबद्ध सामर्थ्य वाली अग्नि नहीं है, क्योंकि धूम नहीं पाया जाता है ।

अविरुद्ध कारणानुपलब्धि हेतु

नास्त्यत्र धूमोऽनग्नेः ॥78॥

अन्वयार्थ : यहाँ पर धूम नहीं है, क्योंकि धूम के अविरोधी कारण अग्नि का अभाव है ।

अविरुद्धपूर्वचरानुपलब्धि हेतु

न भविष्यति मुहूर्तान्ते शकटं कृतिकोदयानुपलब्धेः ॥79॥

अन्वयार्थ : एक मुहूर्त के पश्चात् रोहिणी का उदय नहीं होगा, क्योंकि कृतिका के उदय की अनुपलब्धि है ।

अविरुद्ध उत्तरचर अनुपलब्धि हेतु

नोद्गाद् भरणि: मुहूर्तात्प्राक् तत एव ॥80॥

अन्वयार्थ : एक मुहूर्त पहले भरणि का उदय नहीं हुआ है क्योंकि उत्तरचर कृतिका का उदय नहीं पाया जाता ।

अविरुद्धसहचरोपलब्धि

नास्त्यत्र समतुलायामुन्नामो नामानुपलब्धेः ॥81॥

अन्वयार्थ : इस तराजू में एक ओर ऊँचापना नहीं है, क्योंकि उन्नाम का अविरोधि सहचर नहीं पाया जाता है ।

विरुद्ध कार्यानुपलब्धि आदि हेतु विधि में सम्भव, उसके भेद

विरुद्धानुपलब्धिर्विधौ त्रेधा विरुद्ध कार्यकारणस्वभावानुपलब्धिभेदात् ॥82॥

अन्वयार्थ : विधि के अस्तित्व को सिद्ध करने में विरुद्धानुपलब्धि के तीन भेद हैं ।

(1. विरुद्धकार्यानुपलब्धि -- साध्य से विरुद्ध पदार्थ के कार्य का नहीं पाया जाना विरुद्धकार्यानुपलब्धि हेतु है।

2. विरुद्धकारणानुपलब्धि -- साध्य से विरुद्ध पदार्थ के कारण का नहीं पाया जाना विरुद्ध कारणानुपलब्धि है।

3. विरुद्धस्वभावानुपलब्धि -- साध्य से विरुद्ध पदार्थ के स्वभाव का नहीं पाया जाना विरुद्ध स्वभावानुपलब्धि हेतु है।

ये तीनों ही हेतु अपने साध्य के सद्भाव को सिद्ध करते हैं, इसलिए विधि साधक कहा गया है।)

विरुद्धकार्यानुपलब्धि हेतु का उदाहरण

यथास्मिन्प्राणिनि व्याधिविशेषोऽस्ति निरामयचेष्टानुपलब्धेः ॥83॥

अन्वयार्थ : इस प्राणी में व्याधि-विशेष है क्योंकि निरामय (रोग रहित) चेष्टा नहीं पाई जाती है ।

विरुद्धकारणानुपलब्धि हेतु

अस्त्यत्र देहिनि दुःखमिष्टसंयोगाभावात् ॥84॥

अन्वयार्थ : इस प्राणी में दुःख है क्योंकि इष्ट संयोग का अभाव है ।

विरुद्धस्वभावानुपलब्धि रूप हेतु का उदाहरण

अनेकान्तात्मकं वस्त्वेकान्तस्वरूपानुपलब्धेः ॥85॥

अन्वयार्थ : वस्तु अनेकान्तात्मक है अर्थात् अनेक धर्म वाली है, क्योंकि वस्तु का एकान्त रूप पाया नहीं जाता ।

परम्परा से संभव अन्य हेतुओं का पूर्वोक्त हेतुओं में ही अन्तर्भाव

परम्पराया संभवत्साधनमत्रैवान्तर्भावनीयम् ॥86॥

अन्वयार्थ : और भी जो साधन (हेतु) सम्भव हो सकते हैं उनका पूर्वोक्त साधनों में ही अन्तर्भाव करना चाहिए ।

पूर्वानुक्त हेतु का प्रथमोदाहरण

अभूदत्र चक्रे शिवकः स्थासात् ॥87॥

अन्वयार्थ : इस चाक पर शिवक हो गया है, क्योंकि स्थास पाया जा रहा है ।

उक्त हेतु की क्या संज्ञा है?

कार्यकार्यमविरुद्धकार्योपलब्धौ ॥88॥

अन्वयार्थ : कार्य के कार्यरूप उक्त हेतु का अविरुद्धकार्योपलब्धि में अन्तर्भाव होता है ।

परम्परा हेतु का दूसरा दृष्टान्त

नास्त्यत्र गुहायां मृगक्रीडनं, मृगारिसंशब्दनात् । कारणविरुद्धकार्यं विरुद्धकार्योपलब्धौ यथा ॥89॥
अन्वयार्थ : इस गुफा में हरिण की क्रीड़ा नहीं है, क्योंकि सिंह की गर्जना हो रही है, यह कारणविरुद्धकार्यरूप हेतु है, इसका विरुद्धकार्योपलब्धि हेतु में अन्तर्भाव होता है ।

व्युत्पन्नपुरुषों के प्रति अनुमान के अवयवों के प्रयोग का नियम

व्युत्पन्नप्रयोगस्तु तथोपपत्त्याऽन्यथानुपपत्त्यैव वा ॥90॥
अन्वयार्थ : व्युत्पन्नपुरुषों के लिए तथोपत्ति या अन्यथानुपपत्ति नियम से ही प्रयोग करना चाहिए ।

व्युत्पन्न प्रयोग की उदाहरण द्वारा पुष्टि

अग्निमानयं देशस्तथैव धूमवत्त्वोपपत्तेर्धूमवत्त्वान्यथानुपपत्तेर्वा ॥91॥
अन्वयार्थ : यह प्रदेश अग्नि वाला है क्योंकि अग्निवाला होने पर ही धूमवाला हो सकता है । अथवा अग्नि के अभाव में धूमवाला हो नहीं सकता ।

उदाहरणादि के बिना व्याप्ति के नि}चयाभाव की आशंका का निराकरण

हेतुप्रयोगो हि यथा व्याप्तिग्रहणं विधीयते सा च तावन्मात्रेण व्युत्पन्नैरवधार्यते॥ 92॥
अन्वयार्थ : जैसे हेतु का प्रयोग व्याप्ति को ग्रहण करता है, उतने मात्र से बुद्धिमानों के द्वारा धारण किया जाता है ।

दृष्टान्तादिक साध्य की सिद्धि के लिए फलवान नहीं

तावता च साध्यसिद्धिः ॥93॥
अन्वयार्थ : उतने मात्र से ही साध्य की सिद्धि हो जाती है ।

पक्ष का प्रयोग सफल है

तेन पक्षस्तदाधार सूचनायोक्तः ॥94॥
अन्वयार्थ : साधन से व्याप्त साध्य रूप आधार की सूचना के लिए पक्ष कहा जाता है ।

आगम का स्वरूप

आप्तवचनादिनिबन्धनमर्थज्ञानमागमः ॥95॥
अन्वयार्थ : आप्त के वचनादि के निमित्त से होने वाले अर्थज्ञान को आगम कहते हैं ।

शब्द से वास्तविक अर्थबोध होने का कारण

सहजयोग्यतासंकेतवशाद्धि शब्दादयो वस्तुप्रतिपत्तिहेतवः ॥96॥
अन्वयार्थ : सहज योग्यता के होने पर संकेत के वश से शब्दादि वस्तु का ज्ञान कराने के कारण हैं।

शब्दार्थ से अर्थ अवबोध होने का दृष्टान्त

यथा मेर्वादयः सन्ति ॥97॥
अन्वयार्थ : जैसे मेरुपर्वतादिक हैं ।

प्रमाण का विषय

सामान्यविशेषात्मा तदर्थो विषयः ॥1॥
अन्वयार्थ : सामान्य और विशेष स्वरूप वस्तु प्रमाण का विषय है।

अनेकान्तात्मक वस्तु के समर्थन के लिए दो हेतु

अनुवृत्तव्यावृत्तप्रत्ययगोचरत्वात् पूर्वोत्तराकारपरिहारावाप्ति स्थितिलक्षणपरिणामेनार्थक्रियोपपत्तेश्च ॥2॥

अन्वयार्थ : वस्तु अनेकान्तात्मक है, क्योंकि वह अनुवृत्त और व्यावृत्त ज्ञान की विषय है तथा पूर्व आकार का परिहार और उत्तर आकार की प्राप्ति तथा स्थिति लक्षण परिणाम के साथ उसमें अर्थक्रिया पायी जाती है।

सामान्य के भेद

सामान्यं द्वेधा तिर्यगूर्ध्वताभेदात् ॥3॥

अन्वयार्थ : सामान्य के दो भेद हैं -- तिर्यक् सामान्य और ऊर्ध्वपना सामान्य ।

तिर्यक् सामान्य

सदृशपरिणामस्तिर्यक् खण्डमुण्डादिषु गोत्ववत् ॥4॥

अन्वयार्थ : सदृश परिणाम को तिर्यक् सामान्य कहते हैं । जैसे खण्डी, मुण्डी आदि गायों में गोपना ।

ऊर्ध्वता सामान्य

परापरविवर्तव्यापिद्रव्यमूर्ध्वता मृदिव स्थासादिषु ॥5॥

अन्वयार्थ : पूर्व और उत्तर पर्यायों में रहने वाले द्रव्य को ऊर्ध्वता सामान्य कहते हैं। जैसे - स्थास, कोश, कुशूल आदि में मिट्टी रहती है। यहाँ सामान्य पद की अनुवृत्ति है।

विशेष भी दो प्रकार का

विशेषश्च ॥6॥

अन्वयार्थ : विशेष के भी पर्याय और व्यतिरेक दो भेद हैं।

विशेष के भेद

पर्यायव्यतिरेकभेदात् ॥7॥

अन्वयार्थ : पर्याय और व्यतिरेक के भेद से विशेष दो प्रकार का है।

पर्याय विशेष

एकस्मिन्द्रव्ये क्रमभाविन: परिणाम: पर्यायाः आत्मनि हर्षविषादादिवत् ॥8॥

अन्वयार्थ : एक द्रव्य में क्रम से होने वाले परिणामों को पर्याय कहते हैं, जैसे आत्मा में हर्ष विषाद आदिक।

विशेष का दूसरा भेद

अर्थान्तरगतो विसदृशपरिणामो व्यतिरेको गोमहिषादिवत् ॥९॥

अन्वयार्थ : एक पदार्थ की अपेक्षा अन्य पदार्थ में रहने वाले विसदृश परिणाम का व्यतिरेक कहते हैं। जैसे - गााय, भैंस आदि में विलक्षणपना।

प्रमाण का फल

अज्ञाननिवृत्तिर्हानोपादानोपेक्षाश्च फलम् ॥1॥

अन्वयार्थ : अज्ञान की निवृत्ति, त्याग, ग्रहण के प्रति उदासीनता ये प्रमाण के फल हैं।

प्रमाण से फल भिन्न या अभिन्न?

प्रमाणादभिन्नं भिन्नं च ॥2॥

अन्वयार्थ : वह प्रमाण का फल संज्ञा, स्वरूपादि भेद की अपेक्षा से कथञ्चित् अभिन्न है।

कथञ्चित् अभेद का समर्थन

य: प्रमिमीते स एव निवृत्ताज्ञानो जहात्यादत्ते उपेक्षते चेति प्रतीतेः ॥3॥

अन्वयार्थ : जो (जानने वाला) प्रमाण से पदार्थ को जानता है, उसी का अज्ञान निवृत्त होता है, अप्रशस्त पदार्थ का त्याग करता है, इष्ट का ग्रहण करता है अथवा उपेक्षा करता है। यह बात प्रतीति सिद्ध है।

प्रमाणाभास

ततोऽन्यत्तदाभासम् ॥1॥

अन्वयार्थ : पहले कहे गए प्रमाण से भिन्न प्रमाणाभास है।

स्वरूपाभास

अस्वसंविदित-गृहीतार्थदर्शनसंशयादयः प्रमाणाभासाः ॥2॥

अन्वयार्थ : अस्वसंविदित, गृहीतार्थ, दर्शन, संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय को प्रमाणाभास कहते हैं।

क्योंकि वे अपने विषय का निश्चय नहीं करते हैं।

स्वविषयोपदर्शकत्वाभावात्॥3॥

अन्वयार्थ : क्योंकि वे अपने विषय का निश्चय नहीं करते हैं।

दृष्टान्त

पुरुषान्तरपूर्वार्थगच्छत्तृणस्पर्शस्थाणुपुरुषादिज्ञानवत् ॥4॥

अन्वयार्थ : दूसरे पुरुष का ज्ञान गृहीतागृहीतज्ञान, चलते हुए पुरुष के तृण स्पर्शी ज्ञान के समान स्थाणु है या पुरुष ऐसे संशयादि ज्ञान प्रमाणाभास हैं।पुरुषान्तरं च पूर्वार्थं च, गच्छत्तृणस्पर्शं च, स्थाणुपुरुषादि च तेषां ज्ञानम् तद्वत् सूत्र में इस प्रकार द्वन्द्व समास कर लेना चाहिए।

सन्निकर्षवादी के प्रति दूसरा दृष्टान्त

चक्षुरसयोर्द्रव्ये संयुक्तसमवायवच्च ॥5॥

अन्वयार्थ : द्रव्य में चक्षु और रस के संयुक्त समवाय के समान।

प्रत्यक्षाभास

अवैशद्यै प्रत्यक्षं तदाभासं, बौद्धस्याकस्माद् धूमदर्शनाद् वह्नि विज्ञानवत् ॥6॥

अन्वयार्थ : बौद्ध का अविशदरूप निर्विकल्प ज्ञान को प्रत्यक्ष मानना प्रत्यक्षाभास है। जैसे - अचानक धुआँ देखने से उत्पन्न हुआ अग्नि ज्ञान अनुमानाभास है।

परोक्षाभास

वैशद्यैऽपि परोक्षं तदाभासं मीमांसकस्य करणज्ञानवत् ॥7॥

अन्वयार्थ : विशदज्ञान को भी परोक्ष मानना परोक्षाभास है। जैसे - मीमांसक करणज्ञान को परोक्ष मानते हैं, उनका ऐसा मानना परोक्षाभास है।

स्मरणाभास
अतस्मिंस्तदिति ज्ञानं स्मरणाभासं, जिनदत्ते स देवदत्तो यथा ॥8॥
अन्वयार्थ : पूर्व में अनुभव नहीं किए गए पदार्थ में वह है अर्थात् वैसी है इस प्रकार का ज्ञान स्मरणाभास है। जैसे - जिनदत्त में वह देवदत्त है।

प्रत्यभिज्ञानाभास
सदृशे तदेवेदं तस्मिन्नेव तेन सदृशम्, यमलकवदित्यादि प्रत्यभिज्ञानाभासम् ॥9॥
अन्वयार्थ : सदृश पदार्थ में यह वही है, ऐसा कहना उसी पदार्थ में यह उसके सदृश है, ऐसा कहना। जैसे - युगल उत्पन्न हुए मनुष्यों में विपरीत ज्ञान हो जाता है, ऐसा ज्ञान प्रत्यभिज्ञानाभास है।

तर्काभास
असम्बद्धे तज्ज्ञानं तर्काभासम् ॥10॥
अन्वयार्थ : अविनाभाव सम्बन्ध से रहित पदार्थ में अविनाभाव सम्बन्ध का ज्ञान कराना तर्काभास है।

अनुमानाभास
इदमनुमानाभासम् ॥11॥
अन्वयार्थ : यह अनुमानाभास है (जो आगे कहा जा रहा है) ।

पक्षाभास
तत्रानिष्टादिः पक्षाभासः ॥12॥
अन्वयार्थ : उनमें अनिष्ट आदि (बाधित, सिद्ध) को पक्षाभास कहते हैं ।

अनिष्टपक्षाभास
अनिष्टो मीमांसकस्यानित्यः शब्दः ॥13॥
अन्वयार्थ : मीमांसक का कहना है कि शब्द अनित्य है, यह अनिष्ट पक्षाभास है।

सिद्धपक्षाभास
सिद्धः श्रावणः शब्दः ॥14॥
अन्वयार्थ : शब्द श्रवणेन्द्रिय का विषय है, यह सिद्धपक्षाभास है।

बाधितपक्षाभास
बाधितः प्रत्यक्षानुमानागमलोकस्ववचनैः ॥15॥
अन्वयार्थ : बाधितपक्षाभास प्रत्यक्ष, अनुमान, आगम, लोक और स्ववचन से बाधित होता है।

प्रत्यक्षबाधित
तत्र प्रत्यक्षबाधितो यथा, अनुष्णोऽग्नि द्रव्र्यत्वाजलवत् ॥16॥
अन्वयार्थ : उनमें से प्रत्यक्षबाधित पक्षाभास का उदाहरण। जैसे - अग्नि उष्णता रहित है, क्योंकि यह द्रव्य है। जैसे-जल।

अनुमानबाधितपक्षाभास
अपरिणामी शब्दः कृतकत्वात् ॥17॥

अन्वयार्थ : शब्द अपरिणामी है, कृतक होने से।

आगमबाधितपक्षाभास

प्रेत्यासुखदो धर्मः पुरुषाश्रिततत्वादधर्मवत् ॥18॥

अन्वयार्थ : धर्म परलोक में दुःख देने वाला होता है, क्योंकि वह पुरुष के आश्रित है, जैसे - अधर्म।

लोकबाधितपक्षाभास

शुचि नरशिर: कपालं प्राण्यंगत्वाच्छंखशुक्तिवत् ॥19॥

अन्वयार्थ : मनुष्य के सिर का कपाल पवित्र है, प्राणी का अंग होने से जैसे शंख और सीप।

स्ववचनबाधितपक्षाभास

माता मे वन्ध्या पुरुषसंयोगेऽप्यगर्भत्वात्-प्रसिद्धबन्ध्यावत्॥20॥

अन्वयार्थ : मेरी माता बंध्या है, क्योंकि पुरुष का संयोग होने पर भी उसके गर्भ नहीं रहता। जैसे - प्रसिद्ध बन्ध्या स्त्री।

हेत्वाभासों के भेद

हेत्वाभासा असिद्धविरुद्धानैकान्तिकाकिञ्चित्कराः ॥21॥

अन्वयार्थ : असिद्ध, विरुद्ध, अनैकान्तिक और अकिञ्चित्कर ये चार हेत्वाभास के भेद हैं।

असिद्ध हेत्वाभास

असत्सत्तानिश्चयोऽसिद्धः ॥22॥

अन्वयार्थ : जिस हेतु की सत्ता का अभाव हो अथवा निश्चय न हो उसे असिद्ध हेत्वाभास कहते हैं।

स्वरूपासिद्ध हेत्वाभास

अविद्यमानसत्ताकः परिणामी शब्दः चाक्षुषत्वात् ॥23॥

अन्वयार्थ : शब्द परिणामी है, क्योंकि चाक्षुष है, यह अविद्यमान सत्ता वाले स्वरूपासिद्ध हेत्वाभास का उदाहरण हैं।

इस हेतु के असिद्धपना कैसा?

स्वरूपेणासत्वात् ॥24॥

अन्वयार्थ : शब्द का चाक्षुष होना स्वरूप से ही असिद्ध है।

असिद्ध हेत्वाभास का दूसरा भेद

अविद्यमाननिश्चयो मुग्धबुद्धिं प्रत्यग्निरत्रधूमात् ॥25॥

अन्वयार्थ : मुग्ध बुद्धि पुरुष के प्रति कहना यहाँ अग्नि है धूम होने से। यह अविद्यमान निश्चय वाले संदिग्धासिद्ध हेत्वाभास का उदाहरण है।

इस हेतु की भी असिद्धता कैसे ?

तस्य वाष्पादिभावेन भूतसंघाते सन्देहात् ॥26॥

अन्वयार्थ : क्योंकि उसे भूतसंघात में भाप आदि के रूप से संदेह हो सकता है। भूतसंघात -चूल्हे से उतारी हुई बटलोई, क्योंकि उसमें पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु चारों रहते हैं और भाप भी निकलती रहती है।

असिद्धहेत्वाभास का और भी दृष्टान्त

सांख्यम्प्रति परिणामी शब्दः कृतकत्वात् ॥27॥

अन्वयार्थ : सांख्य के प्रति कहना है कि शब्द परिणामी है क्योंकि वह कृतक है।

इस हेतु की असिद्धता में कारण

तेनाज्ञातत्वात् ॥28॥

अन्वयार्थ : क्योंकि उसने कृतकपना जाना ही नहीं है।

विरुद्ध हेत्वाभास

विपरीतनिश्चिताविनाभावो विरुद्धोऽपरिणामी शब्दः कृतकत्वात् ॥29॥

अन्वयार्थ : साध्य से विपरीत पदार्थ के साथ जिसका अविनाभाव निश्चित हो, उसे विरुद्धहेत्वाभास कहते हैं, जैसे शब्द अपरिणामी है, क्योंकि वह कृतक है।

अनैकान्तिक हेत्वाभास

विपक्षेऽप्यविरुद्धवृत्तिरनैकान्तिकः ॥30॥

अन्वयार्थ : जिसका विपक्ष में भी रहना अविरुद्ध है, अर्थात् जो हेतु पक्ष सम्पदा के समान विपक्ष में भी बिना किसी विरोध के रहता है, उसे अनैकान्तिक हेत्वाभास कहते हैं।सूत्र पठित अपि शब्द से न केवल पक्ष-सपक्ष में रहने वाला हेतु लेना किन्तु विपक्ष में भी रहने वाले हेतु का ग्रहण करना चाहिए।

निश्चित विपक्षवृत्ति का उदाहरण

निश्चितवृत्तिरनित्यः शब्दः प्रमेयत्वात् घटवत् ॥31॥

अन्वयार्थ : शब्द अनित्य है, प्रमेय होने से। जैसे-घट।

प्रमेयत्व हेतु की भी विपक्ष में वृत्ति कैसे निश्चित है?

आकाशे नित्येऽप्यस्य निश्चयात् ॥32॥

अन्वयार्थ : क्योंकि नित्य आकाश में भी इस प्रमेयत्व हेतु के रहने का निश्चय है।

शंकित विपक्षवृत्ति अनैकान्तिक हेत्वाभास

शंकितवृत्तिस्तु नास्ति सर्वज्ञो वक्तृत्वात् ॥33॥

अन्वयार्थ : सर्वज्ञ नहीं है, क्योंकि वह वक्ता है अर्थात् बोलने वाला होने से, यह शंकित विपक्षवृत्ति अनैकान्तिक हेत्वाभास का उदाहरण है।

इस वक्तत्व हेतु का भी विपक्ष में रहना कैसे शंकित है?

सर्वज्ञत्वेन वक्तृत्वाविरोधात् ॥34॥

अन्वयार्थ : क्योंकि सर्वज्ञपने के साथ वक्तापने का कोई विरोध नहीं है।

अकिञ्चित्कर हेत्वाभास

सिद्धे प्रत्यक्षादिबाधिते च साध्ये हेतुरकिञ्चित्करः ॥35॥

अन्वयार्थ : साध्य के सिद्ध होने पर तथा प्रत्यक्षादि प्रमाणों से बाधित होने पर प्रयुक्त हेतु अकिञ्चित्कर हेत्वाभास कहलाता है।

सिद्धसाध्य अकिञ्चित्कर हेत्वाभास

सिद्धः श्रावणः शब्दः शब्दत्वात् ॥36॥

अन्वयार्थ : शब्द कर्ण इन्द्रिय का विषय होता है, इसलिए सिद्ध है, शब्द होने से।

शब्दत्व हेतु के अकिञ्चित्करता कैसे

किञ्चिदकरणात् ॥37॥

अन्वयार्थ : कुछ भी नहीं करने से शब्दत्वहेतु अकिञ्चित्कर हेत्वाभास है।

शब्दत्वहेतु के अकिञ्चित्करत्व की पुष्टि

यथाऽनुष्णोऽग्निद्रव्यत्वादित्यादौ किञ्चित्कर्तुमशक्यत्वात् ॥38॥

अन्वयार्थ : जिस प्रकार अग्नि ठण्डी होती है क्योंकि वह द्रव्य है इत्यादि अनुमानों में कुछ भी नहीं कर सकने से द्रव्यत्वादि हेतु अकिञ्चित्कर कहे जाते हैं ।

अकिञ्चित्कर हेत्वाभास के प्रयोग की उपयोगिता

लक्षणे एवासौ दोषो व्युत्पन्नप्रयोगस्य पक्षदोषेणैवदुष्टत्वात् ॥39॥

अन्वयार्थ : लक्षण की अपेक्षा से ही यह दोष है क्योंकि व्युत्पन्न पुरुषों का प्रयोग पेक्ष के दोषों से ही पुष्ट हो जाता है।

अन्वय दृष्टान्ताभासों के भेद

दृष्टान्ताभासा अन्वयेऽसिद्धसाधनोभयाः ॥40॥

अन्वयार्थ : अन्वय दृष्टान्ताभास के तीन भेद हैं - साध्य विकल, साधन विकल और उभयविकल।

अन्वयदृष्टान्ताभास के भेद

अपौरुषेयः शब्दोऽमूर्तत्वादिन्द्रियसुखपरमाणुघटवत् ॥41॥

अन्वयार्थ : शब्द अपौरुषेय है, अमूर्त होने से, इन्द्रिय सुख, परमाणु और घट के समान।

अन्वय दृष्टान्ताभास का उदाहरणान्तर

विपरीतान्वयश्च यदपौरुषेयं तदमूर्तम् ॥42॥

अन्वयार्थ : जो अपौरुषेय होता है, वह अमूर्त होता है, वह विपरीतान्वय नाम का दृष्टान्ताभास है।

अन्वय दृष्टान्ताभास की पुष्टि

विद्युदादिनाऽति प्रसङ्गेत् ॥43॥

अन्वयार्थ : क्योंकि इसमें बिजली आदि से अतिप्रसंग दोष आता है।

व्यतिरेक उदाहरणाभास

व्यतिरेकेऽसिद्धतद्व्यतिरेका, परमाण्विन्द्रिय सुखाकाशवत् ॥44॥

अन्वयार्थ : व्यतिरेकदृष्टान्ताभास साध्यविकल, साधनविकल, उभय विकल इनके उदाहरण परमाणु इन्द्रियसुख और आकाश हैं।

व्यतिरेक दृष्टान्ताभास का उदाहरणान्तर

विपरीतव्यतिरेकश्च यन्नामूर्तं तन्नापौरुषेयम् ॥45॥

अन्वयार्थ : जो अमूर्त नहीं है, वह अपौरुषेय नहीं है, यह विपरीत व्यतिरेक दृष्टान्ताभास का उदाहरण है।

बालप्रयोगाभास

बालप्रयोगाभासः पञ्चावयवेषु कियद्धीनता ॥46॥

अन्वयार्थ : पाँच अवयवों में से कितने ही कम अवयवों का प्रयोग बाल प्रयोगाभास है।

बालप्रयोगाभास का उदाहरण

अग्निमानयं प्रदेशो धूमवत्वाद्यदित्थं तदित्थं यथा महानसः ॥47॥

अन्वयार्थ : यह प्रदेश अग्नि वाला है, धूम वाला होने से। जो धूम वाला होता है, वह अग्नि वाला होता है, जैसे रसोईघर।

चार अवयवों के प्रयोग करने पर तदाभासता

धूमवाँश्चायम् ॥48॥

अन्वयार्थ : और यह भी धूम वाला है।

अवयवों के विपरीत प्रयोग करने पर भी प्रयोगाभास

तस्मादग्निमान् धूमवान् चायम् ॥49॥

अन्वयार्थ : इसलिए यह अग्नि वाला है और यह भी धूम वाला है।

अवयवों के विपरीत प्रयोग करने पर प्रयोगाभास कैसे?

स्पष्टतया प्रकृतप्रतिपत्तेरयोगात् ॥50॥

अन्वयार्थ : कम अवयव प्रयोग करने पर पदार्थ का स्पष्टता से ठीकठीक ज्ञान नहीं होता।

आगमाभास

रागद्वेषमोहाक्रान्तपुरुषवचनाज्जातमागमाभासम् ॥51॥

अन्वयार्थ : रागद्वेषमोह से आक्रान्त (व्याप्त) पुरुष के वचनों से उत्पन्न हुए पदार्थ के ज्ञान को आगमाभास कहते हैं।

आगमाभास का उदाहरण

यथा नद्यास्तीरे मोदकराशयः सन्ति, धावध्वं माणवकाः ॥52॥

अन्वयार्थ : जैसे कि - हे बालको दौड़ो, नदी के किनारे लड्डुओं के ढेर लगे हैं।

आगमाभास का दूसरा उदाहरण

अंगुल्यग्रे हस्तियूथशतमास्ते इति च ॥53॥

अन्वयार्थ : अंगुली के अग्र भाग पर हाथियों के सौ समुदाय रहते हैं।

दोनों वाक्यों में आगमाभासपना कैसे?

विसंवादात् ॥54॥

अन्वयार्थ : विसंवाद होने से।

संख्याभास

प्रत्यक्षमेवैकं प्रमाणमित्यादि संख्याभासम् ॥55॥

अन्वयार्थ : ्रत्यक्ष ही एक प्रमाण है, इत्यादि रूप से सर्व संख्याभास है।

यह संख्याभास कैसे?

लौकायतिकस्य प्रत्यक्षत: परलोकादिनिषेधस्य परबुद्धया देश्वासिद्धेरतद्विषयत्वात् ॥56॥

अन्वयार्थ : चार्वाक का प्रत्यक्ष को प्रमाण मानना इसलिए संख्याभास है कि प्रत्यक्ष से परलोक आदि का निषेध और पर की बुद्धि आदि की सिद्धि नहीं होती है, क्योंकि वे उसके विषय नहीं है।

बौद्धादि के मत में भी संख्याभासपना

सौगतसांख्ययोगप्राभाकरजैमिनीयानां प्रत्यक्षानुमानागमोप मानार्थापत्याभावैरेकैकाधिकैः व्याप्तिवत् ॥57॥

अन्वयार्थ : जिस प्रकार बौद्ध, सांख्य, योग, प्रभाकर और जैमिनीयों के प्रत्यक्ष, अनुमान, आगम, उपमान, अर्थापत्ति और अभाव इन एक-एक अधिक प्रमाणों के द्वारा व्याप्ति विषय नहीं की जाती है।

अन्य अनुमानादिक से प्रमाण हो जायेगा?

अनुमानादेरतद्विषयत्वे प्रमाणान्तरत्वम् ॥58॥

अन्वयार्थ : अनुमानादि के परबुद्धि आदिक का विषयपना मानने पर अन्य प्रमाणों के मानने का प्रसंग आता है।

इसी विषय में उदाहरण

तर्कस्येव व्याप्तिगोचरत्वे प्रमाणान्तरत्वमप्रमाणस्या व्यवस्थापकत्वात् ॥59॥

अन्वयार्थ : तर्क को व्याप्ति का विषय करने वाला मानने पर बौद्धादि को उसे एक भिन्न प्रमाण मानना पड़ता है, क्योंकि अप्रमाणज्ञान पदार्थ की व्यवस्था नहीं कर सकता है।

प्रतिभासस्य च भेदकत्वात् ॥60॥

अन्वयार्थ : प्रतिभास का भेद ही प्रमाणों का भेदक होता है।

विषयाभास

विषयाभासः सामान्यं विशेषो द्वयं वा स्वतन्त्रम् ॥61॥

अन्वयार्थ : केवलसामान्य को, केवल विशेष को अथवा स्वतंत्र दोनों को प्रमाण का विषय मानना विषयाभास है।

सांख्यादिकों की मान्यताएँ विषयाभास

तथाऽप्रतिभासनात् कार्याकरणाच्च ॥62॥

अन्वयार्थ : उस प्रकार का प्रतिभास न होने से और कार्य को नहीं करने से।

समर्थस्य करणे सर्वदोत्पत्तिरनपेक्षत्वात् ॥63॥

अन्वयार्थ : समर्थ पदार्थ के कार्य करने पर अपेक्षा न होने से हमेशा कार्य की उत्पत्ति का प्रसंग आता है।

परापेक्षणे परिणामित्वमन्यथा तदभावात् ॥64॥

अन्वयार्थ : दूसरे सहकारी कारणों की अपेक्षा रखने पर परिणामीपना प्राप्त होता है, अन्यथा कार्य नहीं हो सकता है।

स्वयमसमर्थस्याकारकत्वात् पूर्ववत् ॥65॥

अन्वयार्थ : आप ही असमर्थ के पूर्व के समान (प्रथम पक्ष के समान) कार्य करने वाला न होने से।

फलाभास

फलाभास: प्रमाणादभिन्न भिन्नमेव वा ॥66॥

अन्वयार्थ : प्रमाण से उसके फल को सर्वथा अभिन्न तथा भिन्न मानना फलाभास है।

सर्वथा अभिन्न पक्ष में फलाभास

अभेदे तद्व्यवहारानुपपत्तेः ॥67॥

अन्वयार्थ : प्रमाण से फल सर्वथा अभिन्न माना जाए तो प्रमाण और प्रमाण के फल में व्यवहार ही नहीं हो सकता है।

कल्पना से प्रमाण और फल का व्यवहार करने में आपत्ति

व्यावृत्त्यापि न तत्कल्पना फलान्तराद् व्यावृत्याऽफलत्व प्रसंगात् ॥68॥

अन्वयार्थ : अफल की व्यावृत्ति से भी फल की कल्पना नहीं की जा सकती अन्यथा फलान्तर का व्यावृत्ति से अफलपने की कल्पना का प्रसंग आ जायेगा।

अभेद पक्ष में दृष्टान्त

प्रमाणान्तरात् व्यावृत्यावाप्रमाणत्वस्य ॥69॥

अन्वयार्थ : अन्य प्रमाण की (प्रमाणान्तर) व्यावृत्ति (निराकरण) से अप्रमाणपने का प्रसंग आता है।

उपसंहार

तस्माद्वास्तवो भेदः ॥70॥

अन्वयार्थ : इसलिए प्रमाण और फल में परमार्थ से भेद है।

सर्वथा भेदपक्ष में दूषण

भेदेत्वात्मान्तरवत्तदनुपपत्तेः ॥71॥

अन्वयार्थ : भेद मानने पर अन्य आत्मा के समान यह इस प्रमाण का फल है ऐसा व्यवहार हो नहीं सकता है।

प्रमाण और फल को समवाय सम्बन्ध मानने में दोष

समवायेऽति प्रसंगः ॥72॥

अन्वयार्थ : समवाय के मानने पर अतिप्रसंग का दोष आता है।

अपने पक्ष के साधन और परपक्ष के दूषण व्यवस्था

प्रमाणतदाभासौ दुष्टतयोद्भावितौ परिहृतापरिहृतदोषौ वादिनः साधनतदाभासौ प्रतिवादिनो दूषणभूषणे च ॥73॥

अन्वयार्थ : वादी के द्वारा प्रयोग में लाए गए प्रमाण और प्रमाणाभास प्रतिवादी के द्वारा दोष रूप में प्रकट किये जाने पर वादी से परिहार दोष लिए रहते हैं तो वे वादी के लिए साधन और साधनाभास हैं और प्रतिवादी के लिए दूषण और भूषण हैं।

संभवदन्यद्विचारणीयम् ॥74॥

अन्य ग्रन्थों में नयादि तत्त्व

अन्वयार्थ : संभव अन्य (नय-निक्षेपादि) भी विचारणीय है।

उपसंहार

परीक्षामुखमादर्शी, हेयोपादेयतत्त्वयोः ।
संविदे मादृशो बालः, परीक्षादक्षवद् व्यधाम ॥

अन्वयार्थ : छोड़ने योग्य और ग्रहण करने योग्य तत्त्व के ज्ञान के लिए दर्पण के समान इस परीक्षामुख ग्रन्थ को मुझ सदृश बालक ने परीक्षा में निपुण पुरुष के समान रचा।